जायसी की रहस्य भावना

डॉ. वसुन्धरा उपाध्याय

रहस्यवादी भक्त परमात्मा को अपने परम एवं प्रियतम के रूप में देखता है। वह उस परम सत्ता के साक्षात्कार और मिलन के लिए वैकल्य का अनुभव करता है जैसे मेघ और सागर के जल में मूलतः कोई भेद नहीं है। फिर भी मेघ का पानी नदी रूप में सागर से मिलने को व्याकुल रहता है। ठीक उसी प्रकार की अभेद जन्य व्याकुलता एवं मिलन जन्य विहवलता भक्त की भी होती है। जायसी की रहस्य-मुखता भी इसी शैली की है। जायसी रहस्यमयी सत्ता का आभास देने के लिए बहुत ही रमणीय तथा ममर्स्पशी दृश्य संकेत उपस्थित करने में समर्थ हुए हैं।

साधारणतया देखने में यजुर्वेद के वृहदारण्यकोपनिषद का अहं-ब्रह्मास्मि तथा सूफियों का अनलहक एक से प्रतीत होते है। किन्तु भारतीय अद्वैतवाद बड़े-बड़े ज्ञानी ऋषियों के तत्व चिन्तन का परिणाम है और अनलहक एक अत्रप्त भावना का। इस्लाम धर्म में बृद्धि के संयित तर्क को, स्थान न था। वह एक विश्वास मूलक धर्म है। अस्तु जब अद्धैतवाद का आधार लेकर कल्पना या भावना उठ खड़ी होती है अर्थात जब उसका संचार भाव क्षेत्र में होता है। तब उच्चकोटि के भावात्मक रहस्यवाद की प्रतिष्ठा होती है।[1]

रहस्यवाद दो प्रकार का होता है - भावात्मक और साधनात्मक। साधानात्मक के अन्तर्गत हठयोग तंत्र रसायन आदि की प्रक्रियाऐं आती है जिनके द्वारा साधक रहस्य की खोज करने का प्रयास करता है और भावात्मक रहस्यवाद में साधक उस परम सत्ता के प्रति किसी सम्बन्ध विशेष की भावना में अटल विश्वास करता है। कोई उसे पिता के रूप में देखता है, तो कोई सखा के रूप में, कोई उसकी प्यारी दुलहिन बनता है, तो कोई उसका प्यारा प्रियतम बन उसके प्रणय की कामना करता है। किन्तु इस सम्बन्धों के मूल में अटल विश्वास अभिप्रेत है-जो बिना विश्वास के यह चल ही नहीं सकता। सूफियों की रहस्य भावना मूलतः भावनात्मक है। वह परमप्रभु उनका प्यारा प्रियतम है। वे उसकी प्रणय कामना के लिए कष्ट उठाते है। किन्तु जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है। भारत में सूफियों का सर्वप्रथम सम्पर्क यहां के नाथ योगियों से हुआ और वे उनके साधनात्मक रहस्यवाद से भी बहुत अधिक प्रभावित हुए। भारतीय सूफियों में दोनों प्रकार की रहस्यभावनाएं दृष्टिगोचर होती है।

अद्वैतवाद में एक और तो ब्रह्म और जीव का एकत्व प्रतिपादन किया जाता है और दूसरी ओर ब्रह्म तथा प्रकृति की भी एकता स्थापित की जाती है। अतएव सूफी केवल उस परम में लय हो जाने की उत्कृष्ट अभिलाषा लिए होता है। वरन ससांर के प्रत्येक पदार्थ में उसके कण-कण में उसी परम का चमत्कार देखता है। प्रकृति का प्रत्येक व्यापार उसको उसी विशु की सत्ता का आभास देता है।[2]

रहस्यवाद वह भावनात्मक अभिव्यक्ति है। जिसमें कोई व्यक्ति या रचनाकार उस अलौकिक, परम अव्यक्त सत्ता से अपने प्रेम को प्रकट करता है। वह उस अलौकिक तत्व में डूब जाना चाहता है और जब व्यक्ति इस चरम आनंद की अनुभूति करता है तो उसको वाह्य जगत में व्यक्त करने में उसे अत्यन्त कठिनाई होती है। लौकिक वस्तुएं उस आनंद को व्यक्त नहीं कर सकती। इसीलिए उसे पारलौकिक आनंद को व्यक्त करने के लिए प्रतीकों को सहारा लेना पड़ता है, जो आम जनता के लिए रहस्य बन जाता है। हिन्दी साहित्य में रहस्यवाद सर्वप्रथम मध्यकाल में दिखाई पड़ता है। सत या निर्गुण काव्य धारा में जायसी के काव्य में रहस्यवाद हमें दृष्टिगोचर होता है। संत या निगुर्ण काव्यधारा में कबीर के काव्य में तो प्रेममार्गी या सूफी काव्यधारा में जायसी के यहाँ रहस्यवाद का प्रयोग हुआ है। दोनों ही कवि परम सत्ता से जुड़ना चाहते है और उसमें लीन भी होना चाहते है। कबीर योग के माध्यम से, तो महाकवि जायसी प्रेम के माध्यम से, इसी लिए कबीर का रहस्यवाद अंतर्मुखी व साधनात्मक रहस्यवाद है। जायसी का वहिर्मुखी व भावनात्मक रहस्यवाद है।

जायसी का रहस्यवाद पर सूफी संतों का बहुत प्रभाव पड़ा है। यह तो स्पष्ट है कि जायसी सूफी संत थे। अस्तु उन पर भी नाथ आदि सम्प्रदायों का पूरा प्रभाव था। उनके काव्यों में दोनों प्रकार की रहस्यभावनाओं का स्पष्ट प्रभाव पड़ा है।

काव्य की उस मार्मिक भावभिव्यक्ति को रहस्यवाद कहते है। जिसमें एक भावुक कवि अव्यक्त अगोचर एवं अज्ञात सत्ता के प्रति अपने प्रेमोद्गार प्रकट करता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि –"जहाँ कवि उस अनन्त और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है उसे रहस्यवाद कहते है।"[3] डॉ. श्यामसुन्दर दास ने लिखा है कि- "चिन्तन के क्षेत्र का ब्रह्मवाद कविता के क्षेत्र में जाकर कल्पना और भावुकता का आधार पाकर रहस्यवाद का रूप पकड़ता है।"[4] महाकवि जयशंकर प्रसाद का कथन है कि- "साहित्य में विश्वसुन्दरी प्रकृति में चेतनता का आरोप संस्कृत वांग्मय में प्रचुरता से उपलब्ध होता है। यह प्रकृति अथवा शक्ति का रहस्यवाद सौन्दर्य लहरी के शरीरत्वंशम्भो का अनुकरण मात्र है। वर्तमान हिन्दी में इस अद्वैत रहस्यवाद की सौन्दर्यमयी व्यंजना होने लगी है। वह साहित्य में रहस्यवाद का स्वाभाविक विकास है। इसमें उपरोक्त अनुभूति, समरसता तथा प्राकृतिक सौन्दर्य के द्वारा अहं का इदं से समन्वय करने का सुन्दर प्रयत्न है। हां विरह भी युग की वेदना के अनुकूल मिलन का साधन बनकर इसमें सम्मिलित है।[5]

सुप्रसिद्ध रहस्यवादी कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपनी सीमा को असीम तत्व में खो देने को रहस्यवाद कहा है।[6] डॉ. रामकुमार वर्मा ने कहा है कि- "रहस्यवाद जीवात्मा की उस अन्तर्हित प्रवृत्ति का प्रकाशन है जिसमें वह दिव्य और आलौकिक शक्ति से अपना शान्त और निश्चल सम्बन्ध जोड़ना चाहती है और यह सम्बन्ध यहाँ तक बढ़ जाता है कि दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं रह जाता।" [7]

अतः रहस्यवाद के अन्तर्गत एक कवि उस अज्ञात एवं असीम सत्ता से अपना अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता हुआ उसके प्रति अपने ऐसे प्रेमोद्गार व्यक्त करता है। जिनमें सुख-दुख, आनंद-विषाद, संयोग-वियोग, क्रदंन आदि घुले-मिले रहते है और वह अपनी शान्त अनंत सत्ता में स्वयं को विलीन करके एक व्यापक एवं अखंड आनंद का अनुभव किया करते है। विद्वानों ने रहस्यवाद की विविध स्थितियों का उल्लेख किया है। कुमारी अंडरहिल ने इसाई संतो के रहस्यवाद की छः अवस्थायें घोषित की है- 'आत्मा को जागृत करना, आत्मशुद्धि, आत्मप्रकाश, आत्मा की अधंकारमयी अवस्था, अन्तर्मुखी प्रवृत्ति और दैवीदृश्य।'[8] डा. राम कुमार वर्मा ने रहस्यवाद की तीन अवस्थाओं का वर्णन किया है- 'प्रथम स्थिति में आत्मा परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ने के लिए अग्रसर होती है। द्वितीय स्थिति में आत्मा परमात्मा से प्रेम करने लगती है और तृतीय स्थिति में आत्मा परमात्मा से प्रेम करने लगती है और तृतीय स्थिति में आत्मा और परमात्मा का पूर्ण मिलन अथवा एकीकरण हो जाता है।'[9] जायसी के ग्रन्थ पद्मावत में स्थान-स्थान पर इड़ा, पिंगला, सुसुम्ना नाड़ियों की चर्चा है। दशम द्वार, बज्रासन, तारी लगाना आदि भी प्रसंगानुकूल उपस्थित है। गोरखनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोपीचन्द मयनावती आदि के भी प्रसंग है। किन्तु

ऐसे स्थलों पर कवि का मन नहीं लगा है। कवि इस साधनात्मक क्षेत्र के व्राह्य से ही परिचित ज्ञात होता है। लगता है इसमें अधिक विश्वास भी नहीं था।

सभी रहस्यवादी कवियों में अधिकांश रहस्यवाद की शांत अवस्थायें देखी जा सकती है। वही जायसी के महाकाव्य पद्मावत में भी देखने को मिलती है। जो इस प्रकार से है - जिज्ञासा, महत्वदर्शन, प्रयत्न, विघ्न एवं वेदना, आभास, अपरेक्ष अनुभूति और चिरमिलन। इन्हीं के आधार पर पद्मावत में व्यक्त रहस्यवाद का विवेचन है -

1. जिज्ञासा - पद्मावत में हीरामन तोता रूपी गुरू राजा रत्नसेन रूपी शिल्य या जिज्ञासु के सामने उस अनुपम, अद्वितीय, अलौकिक एवं अर्निद्ध सुन्दरी पद्मावती रूपी अव्यक्त सत्ता के अद्भुत रूप का वर्णन का करता है और कहता है कि -

बेनी छोरि झारू जौ घारा सरग पतार होई अधियारा 99/4 पदमावत
सेवा करांहि नखत और तरई उअै गगन निसि गांग। 100/2पदमावत
सहज करां जो सुरज दिपाई। देखिलिलार सोउ छपि जाई। 101/2पदमावत

उसके रूप माधुर्य की अद्भुत चर्चा सुनकर वह अपनी यह जिज्ञासा प्रकट करता है कि उस दिव्य सत्ता को प्राप्त करने के लिए चाहे मुझे भौरा बनना पड़े, अपने शरीर को कांटो से ही छिड़वाना क्यों न पड़े, पर में उस कमल (पद्मावती) से भेंट अवश्य करूंगा-

अबके फनिंग कै करा। भॅवर होऊॅ जेहि कारन जरा।
फूल फूल फिरि पूछौ जौ पहुॅचौ ओहि केत।
तन नेवछावर कै मिलौ ज्यौ मधुकर जिउ देत। 25/29पदमावत

यही है रहस्यवादी कवि या साधक की प्रथम स्थिति जिसका निरूपण जायसी ने अपने महाकाव्य पद्मावत में किया है।

2. महत्व प्रदर्शन - जब एक रहस्यवादी कवि के हृदय में उस अज्ञात एवं उस अगोचर सत्ता को प्राप्त करने या जानने की इच्छा जागृत हो जाती है तब उसे विश्व के कण-कण में उसी के सौन्दर्य की झांकी दिखाई देने लगती है। इसी कारण पद्मावत में भी राजा रत्नसेन के हृदय में जब पद्मावती रूपी अज्ञात सत्ता के प्रति प्रेम भावना जाग्रत हो जाती है तब वह मूर्छित हो जाता है, किन्तु होश में आते ही वह यह कहता है कि 'अरे मुझे जो ज्ञान प्राप्त हो गया था, उसे अब होश में आकर मैंने खो दिया है।[9] इस प्रकार उस अव्यक्त सत्ता के महत्व का निरूपण करता हुआ, राजा उसे अमृतमयी अनन्त सुख प्रदायिनी, जीवनदायिनी, सर्वशक्तिमयी, अगोचर आदि बतलाता है। वैसे भी परमसत्ता का स्थान सर्वोपरि है। वह अव्यक्त सत्ता रूपी पद्मावती इतना सौन्दर्य लेकर उत्पन्न हुयी है कि उसके सामने चन्द्रमा भी क्षीण हो जाता है -

अतें रूप मूरति परगटी। पुनिउॅ ससि सो खीन होई घटी।
घटतहिं घटत अमावस भई। 51/4-5 पद्मावत

इस प्रकार कवि ने उस अज्ञात अगोचर एवं अत्यन्त सत्ता के महत्व का अत्यधिक सुन्दर निरूपण किया है और यही रहस्यवाद की दूसरी अवस्था है।

3. प्रयत्न - जब साधक एवं प्रेमी को उस अज्ञात एवं अगोचर सत्ता के परमधाम का यतकिंचित ज्ञान हो जाता है। तब वह उस सत्ता का साक्षात्कार करने के लिए अथवा उसे प्राप्त करने के लिए अथक प्रयत्न करता है। राजा सब कुछ त्याग देता है और केवल उसी को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है -

चला भुगुति मांगे कहं साजि कया तप जोग।
सिद्ध होऊँ पदुमावति पाएँ हिरदै जेंहि क बियोग। 126पदमावत

इतना ही नहीं वह साहस, शक्ति एवं दृढ़ संकल्प के बल पर सिंहल दीप जाता है पर पकड़े जाने पर वह पद्मावती को प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं छोड़ता। उसे शूली का दण्ड मिलता है पर वह नहीं घबराता, केवल अपनी परमसत्ता को प्राप्त करने का ही जाप करता है -

औ सवरौ पदुमावति रामा। यह जिउ निवछावरि जेहि नामा।

रकत के बूंद कया जत अंहही। पदुमावति पदुमावति कहहीं।

इस प्रकार कवि ने प्रेमी साधक के उन प्रयत्नों का अत्यन्त मर्मस्पर्शी वर्णन किया है जिनके फलस्वरूप उसे सिद्धि प्राप्त होती है।

4. विघ्न एवं वेदना - प्रत्येक साधक को अपनी अपनी साधना के मार्ग में अनेकानेक विघ्नों, कष्टों एवं यातनाओं का सामना करना पड़ता है, तब कहीं जाकर उसे सफलता मिलती है और वे उस अगम्य अगोचर सत्ता का साक्षात्कार प्राप्त कर पाते है। पद्मावत में रत्नसेन ने जिन कष्टों का सामना किया है जायसी ने बड़ी रोचकता के साथ वर्णन किया है। सर्वप्रथम पत्नी और माता ही रत्नसेन को रोकती है

विनवै रतनसेनि कै माया।[129।पदमावत]

रौवै नागमती रनिवासू। [131।पदमावत]

फिर हनुमान की हाके भी इस मार्ग में भय एवं विघ्न उपस्थिति करने वाली बतलाई गयी है -

ऐहि आगे परवत की पाटी। विषम पहार अगम सुठि घाटी।

विच विच खोह नदी औ नारा। ठॉवहि ठॉव उॅठहि बटपारा।

हनिवॅत करे सुनब पुनि हॉका। [136/4-6पदमावत]

इस प्रकार घर से निकलकर राजा रत्नसेन को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। पर इन सभी का वह डटकर मुकाबला करता है। इन सबका निरूपण जायसी ने बड़ी ही मार्मिकता के साथ किया है।

5. आभास - सम्पूर्ण विघ्न बाधाओं को समाप्त करता हुआ रत्नसेन उत्तरोत्तर साधना के पथ पर बढ़ता चला जाता है। तब उसे अव्यक्त सत्ता की दिव्य छटा का आभास मिलने लगता है। उसका नाम जपते- जपते उसे उस अगोचर सत्ता की झलक दिखाई देने लगती है और वह योग साधना के कारण वह अव्यन्त सत्ता भी व्यथित एवं बैचेन होकर अपने साधक के समीप आने के लिए व्यग्र दिखाई देती हे। सिंहलद्वीप पहुंचकर वह शिवमंडप में सिंहचर्म विछाकर बैठ जाता है और पद्मावती पद्मावती का जाप करने लगता है।

बैठ सिंघ छाला होई तपा। पदुमावति पद्मावति जपा।

दिस्टि समाधि ओहिं सौ लागी। जेहि दरशन कारन वैरागी। [167/72पदमावत]

रत्नसेन की कठिन तपस्या का यह प्रभाव होता है कि इन सब का आभास पद्मावती को भी होने लगता है राजा के विरह का अनुभव वह भी करने लगती है -

पद्मावति तेहि जोग संजोगा। परी पेम बस गहें वियोग।[168।पदमावत]

6. अपरोक्ष अनुभूति - जब साधक उस दिव्य ज्योति या परम सत्ता के सौन्दर्य की एक झलक देख लेता है। तब उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है और ज्ञानोदय होते ही उसे संसार की वास्तविकता का ठीक-ठीक पता लग जाता है। सांसारिक स्थिति के यर्थाथ ज्ञान को ही अपरोक्ष अनुभूति कहते हे। इस ज्ञान के होते ही एक साधक भली-प्रकार समझ जाता है कि मेरी साधना में क्या कमी है जिससे मुझे परमसत्ता के दर्शन नहीं होते। पद्मावत में भी राजा जब पद्मावती रूपी परम

सत्ता की एक झलक पाते ही मूर्क्षित हो जाता है और भली-प्रकार से दर्शन भी नहीं कर पाता। राजा वियोग से फिर व्याकुल हो जाता है -

कहां सो मूरति परी जो डीठी। कादि लीन्ह जिउ हिएँ पईठी
कहाँ सो दरस परस जेहि लाहा। 201/3-4पदमावत

7. चिरमिलन - रहस्यवाद की अन्तिम अवस्था है – चिर-मिलन, जिसमें आत्मा और परमात्मा का पूर्ण मिलन एवं तादाम्य होता है। जिस साधक को संसार का यथार्थ बोध हो जाता है साधना के रहस्य का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है तब वह निर्भय होकर साधना के अन्तिम सोपान तक पहुँच जाता है और बिना संकोच किये वह सातवें आसमान पर भी चढ़ता जाता है। तब वह हर सांस में उसी परमसत्ता का स्मरण करता है। उसके रोम-रोम में उसी का स्थान हो जाता है।

दसवें दुवार तारू का लेखा। उलटि दिस्टि जो लख सो देखा।
जाइसो जाई सॉस बन बदी। जस धंसि लीन्ही कान्ह कालिदी। 216-9पदमावत

साधक प्रेमी की तल्लीनता, एकाग्रता, अनन्यता के कारण उसके मार्ग की सभी बाधायें समाप्त हो जाती है -

विहंसी धनि सुनि कै सत बाता। निस्चै तू मोरे रंग राता।
निस्चै भंवर कवल रस रसा। जो जेहि गन सो तेहि मन वसा। 314/1-.2पदमावत

अन्त में दोनें सत्य भाव प्रकट कर ऐसे मिल जाते है, जैसे सोने में सुहागा मिला हो।

कहि सत भाऊ भएऊ कठंलागू। जस कंचन सौ मिला सोहागा। 316पदमावत

फिर दोनों में कोई अन्तर नहीं रहता। दोनें एक हो जाते है दोनों पूर्ण अद्वैत भाव को प्राप्त हो जाते है और दोनों का चिर मिलन हो जाता है क्योंकि दोनें की ऐसी गांठ जुड़ जाती है जो आदि से अन्ततक नहीं छूटती-

औं जो गांठि कतं तुम्ह जोरी। आदि अंत दिन्टि जाई न छोरी। 650-1,4

यही वह चिरमिलन की अवस्था है जिसमें आत्मा और परमात्मा जीव और बृहम दोनें मिलकर एक हो जाते है। इस आध्यात्मिक मिलन का चित्रण जायसी ने बड़ी रोचक शैली में किया है कि -

कै सिंगार ता पहॅ कहँ जाउॅ। ओहि कह देखौ ठॉवाहि ठाउॅ।
जै जिम महं तो उहै पियारा। तन महॅ सोई न होई निनारा। 325,1-4

जायसी ने दर्शन के नीरस एंव शुष्क विचारों पर प्रेम कथा का आकर्षक एवं मनोरंजक आवरण चढ़ाकर रहस्यवाद का अत्यन्त मोहक एवं मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। जायसी के रहस्यवाद में भावुकता की प्राद्यानता है। सरसता की अतिशयता है, मादकता की प्रचुरता है एवं रागात्मिकता की बहुलता है। यहाँ जायसी ने रहस्यवाद की विविध स्थितियों का सांगोपांग निरूपण करके साधक एवं साध्य के मिलन की आनन्दवादी स्थिति का चित्रण बड़ी सजीवता के साथ अंकित किया है, जिसमें लौकिक पति-पत्नी के प्रथम समागम की रसानुभूति को आत्मा-परमात्मा के मिलन की दिव्य अनुभूति तक पहुंचा दिया है। सम्पूर्ण महाकाव्य में उत्कृष्ठा एवं विरह की विहवलता को खूब बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया गया है। यहॉ हृदयस्थ दिव्य सत्ता के सामीप्य भाव की अनुभूति द्वारा उत्पन्न अखंड आनन्द की व्यंजना अत्यन्त मर्मस्पर्शी ढंग से गयी है। यही कारण है कि जायसी के रहस्यवाद में दिव्य रहस्यानुभूति का प्राधान्य है उस अनुभूति के वणर्नो में तीव्र भावुकता की बहुलता है और उस भावुकता के निरूपण में गुहय साधना एवं मनोरम अभिव्यक्ति की अतिश्यता है। जायसी के रहस्यवाद में सरस एवं रोचक वर्णनों का आधिक्य दृष्टिगोचर होता है, भावात्मक वर्णनों की प्रचुरता दिखायी देता हे। सरस एवं मधुर उक्तियों की बहुलता जान पड़ती है। और संवेदन शीलता एवं सहानुभूति के साथ-साथ, रमणीयता एवं रसमयता के भी दर्शन होते है। वास्तव में जायसी की रहस्यभावना बड़ी उच्च कोटि की थी। वह सृष्टि के प्रत्येक प्राणी में, प्रत्येक व्यापार में और प्रत्येक घटना में उसी परमसत्ता की झलक देखते थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1-राजरामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रन्थावली भूमिका,पृ.- 153
2-सूफी महाकवि जायसी डॉ. जयदेश ,पृ.- 352
3-हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल ,पृ.- 668
4-कबीर ग्रन्थावली (भूमिका), पृ.- 56
5-काव्यकला और अन्य निबन्धकार, जयशंकर प्रसाद ,पृ.- 68-69
6-महादेवी का विवेचनात्मक गद्य, पृ.-132
7-रहस्यवाद और हिन्दी कविता डॉ गुलखराय ग्रन्थ डॉ. शम्भुनाथ, पृ.- 136 - 137
8-कबीर का रहस्यवाद पृ.,12-14

संपर्क :

सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग,
एल.एस.एम.रा.स्ना. महाविद्यालय
पिथौरागढ, basu**1577**@gmail.com